

हिन्दी साहित्य में भक्ति के अर्थ का अनुशीलन

डॉ. श्रीकांत मिश्र

हिन्दी विभाग

स्वामी शुकदेवानन्द कॉलेज, शाहजहाँपुर

डॉ. कमलेश मिश्र

उप-प्राचार्य

वीरांगना अवन्तीबाई महाविद्यालय, शाहजहाँपुर

भक्ति के अर्थ पर अनेक विद्वानों ने अपने विचार रखे हैं। इसके अर्थ सम्बन्धी प्राचीन मतों का सर्वप्रथम निरूपण समीचीन है – भक्ति शब्द की निष्पत्ति “भज” धातु से हुई है, जिसका अर्थ होता है सेवा करना। भक्ति में भक्त द्वारा ईश्वर का भजन, पूजा, प्रीति और अर्पण इत्यादि शामिल होता है। सरल शब्दों में कहें तो भक्ति ईश्वर के प्रति भक्त के प्रेम की अभिव्यक्ति है। भक्ति के अर्थ पर विचार करते हुए डॉ. नारायण प्रसाद अपनी पुस्तक भक्ति काव्य की दार्शनिक चेतना में लिखते हैं – “भक्ति शब्द ‘भज्’ सेवायाम् धातु से ‘क्तिन्’ प्रत्यय लगाकर बनाया गया है। जिसका अर्थ है – भगवान् की सेवा-प्रकार। विषय-भेद से भक्ति का स्वरूप-भेद और नाम-भेद भी हो जाता है। “पूज्येष्वनुरागो भक्तिः” पूज्यवर्ग में अनुराग का नाम भक्ति है – इस वचन के अनुसार वह अनुरक्ति-भगवद्विषयिणी, शास्त्रविषयिणी, और ब्राह्मण तथा माता-पिता विषयिणी होने पर भक्ति पदवाच्य होती है। वही पुत्र विषयक वात्सल्य रति, इष्ट विषयक प्रयोरति, मित्र-स्नेह विषयक सख्य रति तथा सेव्य-सेवक भाव सम्बन्धिनी दास्य रति कहलाती है। ‘तत्त्वमसि’ के उपासक आचार्य शंकर ने भक्ति की परिभाषा इस प्रकार दी है- ‘स्व स्वरूपमनुसन्धानं भक्तिरित्यभिधीयते’। अपने स्वरूप का अनुसंधान ही भक्ति है। वैसे तो सब प्रकार की उपास्यगत रति पर ब्रह्म परमात्मा का ही अवगाहन कराती है। पर ब्रह्म परमात्मा का अनुराग एवं श्रद्धापूर्वक भजन, काम, सकाम और निष्काम- सभी के द्वारा अनुष्ठेय है और ‘आत्मनस्तु कामाय सर्वप्रियं भवति’ इस श्रुति के अनुसार आत्मा ही परम प्रेमास्पद होने के कारण उसका अन्वेषण (स्वरूपास्थिति) ही पराभक्ति है। अतएव परा और अपरा भेद से भक्ति दो प्रकार की बताई गई है। पराभक्ति स्वरूपानुसंधान और अपराभक्ति देवादिविषयिणी है।

डॉ. एम. जॉर्ज अपनी पुस्तक भक्ति आन्दोलन और साहित्य में भक्ति पर विचार करते हुए उसे दार्शनिक आधार देते हुए लिखते हैं – “भक्ति भावना का विकास ईश्वर, संसार और मानव के पारस्परिक सम्बन्ध की व्याख्या करने वाले दार्शनिक विचारों पर अवलम्बित है। परन्तु यह उल्लेखनीय है कि हजारों साल तक उपासना करने के बाद ही मानव ने भक्ति भावना को दार्शनिक आधार प्रदान किया। जब दार्शनिक विचारधारा का पर्याप्त विकास हुआ तब भक्ति आन्दोलन का श्री गणेश हुआ। इतिहास तथा साहित्य ने इस आन्दोलन को प्रभावशाली सिद्ध कर दिया। भारत की भावात्मक एकता तथा हिन्दू संस्कृति के विकास में भक्ति आन्दोलन का सर्व प्रमुख योग है। भारत के प्राचीन भक्ति साहित्य में इस आन्दोलन की पृष्ठभूमि प्रस्तुत मिलती है। भक्ति आन्दोलन का अध्ययन मुख्यतः भारतीय इतिहास, साहित्य एवं दर्शन के सम्यक् विवेचन पर आधारित है। प्राचीनतर साहित्य में भी भक्ति



तत्त्वों का पर्याप्त विकसित रूप दृष्टिगत होता है। इसका मूल्यांकन करने के लिये मानव मात्र को उपासना की प्रेरणा देने वाले मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक एवं सामाजिक तत्त्वों तथा उपास्यों के सम्बन्ध में प्रचलित अति प्राचीन धारणाओं का संक्षिप्त परिचय आवश्यक है।''

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार मानव की मौलिक संवेदनाएँ मुख्यतः तीन हैं- जीवन की इच्छा, प्रत्युत्पत्ति तथा समाज बोध। जीवन की इच्छा वाली संवेदना से प्रत्युत्पत्ति तथा समाज बोध दोनों पैदा होते हैं। अतः जीवन की इच्छा को एक मात्र मौलिक एवं परम प्रधान संवेदना मानकर अन्य दोनों को उसके अन्तर्गत समझ लेना ही उचित है। संपूर्ण जीवन की इच्छा मनुष्य को प्रेम करने तथा अपनी परिस्थितियों का अध्ययन करके उन पर विजय पाने की प्रेरणा देती है। मानव ने अनुभव किया कि मैं शक्तिशाली, सौंदर्यमय, कृपाशील एवं रोदृ भाव से युक्त वस्तुओं से घिरा हुआ हूँ। इन सार्वभौम गुणों से युक्त साधनों तथा शक्तियों से तुलना करने पर उसको अपनी हीनता का पता लगा। उसके मन में उनके प्रति कुतूहल, उत्कंठा, श्रद्धा, सभ्रम आदि भावनाएँ जाग्रत हो गयीं। उन अलौकिक शक्तियों के प्रति उसका विश्वास बढ़ने लगा। उनसे प्रेम किये बिना वह नहीं रह सका। मानव ने समझा कि इन अलौकिक शक्तियों पर अवलम्बित हुए बिना मैं अपने जीवन को संपूर्ण नहीं बना सकता। उनको प्रसन्न रखने के लिए उसने उपासना तथा प्रशंसा का सहारा लिया। प्रेम तत्व पर आधारित होने के कारण उपासना सभी के लिये स्वीकार्य बन गयी। प्रेम की भावना ज्ञान प्राप्त करने की प्रेरणा देती है। वस्तुतः प्रेम मार्ग से ही हम दूसरे व्यक्तित्व का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। अन्वेषण की प्रवृत्ति के सहारे मानव ने अपने उपास्य को अलौकिक शक्तियों का स्रोत माना वह उसकी एक मात्र सार्वभौम सत्ता की कल्पना के पथ पर आगे बढ़ा। अतः यह कहा जा सकता है कि मूल भूत प्रेम तत्व पर आधारित भावना ही हर तरह की उपासनाओं तथा धार्मिक आचरणों का आधार है।

उपासना के प्रेरक प्रेम और ज्ञान दोनों तत्त्वों ने यथाक्रम आत्मनिष्ठ और व्यक्ति निरपेक्ष साधनाओं को जन्म दिया। इन साधनाओं ने अनेक भावनाओं को जन्म दिया जो उपासना प्रणाली तथा उपास्य सम्बन्धी भावनाओं को जाग्रत कर सकीं। उपासक अपनी आवश्यकताओं का निवारण करने में उपास्यों की क्षमता पर विश्वास करने लगे। शिकार, पशुचारण, कृषि, मत्स्य-बन्धन आदि विभिन्न कार्यों में विजय प्राप्त करने के लिए उपासना का आयोजन हुआ। इस निर्भरता की भावना ने स्रष्टा तथा सृष्टि की कल्पनाओं को जन्म दिया। मनुष्य ने अपने माता-पिताओं से उपास्यों की तुलना की। उसने समझ लिया कि जैसे माता-पिता अपने बच्चों का पालन करते हैं वैसे ही उपास्य अपने उपासकों की देखरेख में सदा तत्पर रहते हैं। यह माता तथा पिता के प्रतिनिधियों को आराध्यों में से ढूँढ निकालने के लिए प्रेरक बन गया। अपने बश के परे की घटनाओं का सामना करने का अवसर आने पर मानव काफी लाचार हो जाता था। उत्कंठा तथा संघर्ष की ऐसी परिस्थितियों में वह उपास्य की शरण में जाने लगा। यही वैराग्य भावना का मूल था। नशे में जाने पर मानव सुध बुध खोकर बैठता था। उसने अपने इस उन्माद को उपास्य के तादात्म्य से जन्म स्थिति के समान माना। यह नशीली चीजों को उपासना में स्थान देने में प्रेरक हुआ। उपासना के इस प्रकार परम सुख का साधन बन जाने के कारण उसकी लोकप्रियता बढ़ी होगी।

ज्ञान का अन्वेषण करने की प्रवृत्ति से प्रेरित होकर मानव ने संसार की विभिन्न प्रक्रियाओं तथा प्राप्त शक्तियों की व्याख्या प्रस्तुत करनी चाहिए। यह नाना प्रकार के विकल्पासों के पनपने में सहायक बनी। शक्तिशाली जानवरों तथा प्राकृतिक विधानों को उसने गुह्य शक्ति से सम्पन्न माना। नाना प्रकार की सहज उद्बुद्ध किंवदन्तियों ने इन धारणाओं का यथेष्ट पिष्टपेषण किया। टोटम पूजा तथा प्रकृति पूजा का यही प्रेरक बन गया। विधान ने जब प्रकृति के रहस्यों को खोल दिया तब इन उपासनाओं के आधार काफी बलहीन हो गये। बौद्धिक प्रवृत्ति ने परम श्रेय की कल्पना करने की प्रेरणा दी। यह पाप के बोध तथा मुक्ति-सम्बन्धी विचारों को बल प्रदान कर सका। मानव ने सोचा कि अन्तःकरण की मर्यादान्वित पुकार किसी अलौकिक देवता को चेतावनी है। यह आदर्श कल्पना मानव को पथ प्रदर्शक तथा अनिवार्य ज्ञात हुई होगी। मानव ने आत्मसमीकरण की भावना से प्रेरित होकर अलौकिक



शक्तियों के बारे में विचार किया। यह उन शक्तियों पर मानव सहज गुणों का आरोप करने में सहायक हुआ। धीरे-धीरे उसने समझा कि मैं उपास्य देवता के लिए बना हूँ और जब तक उसको प्राप्त नहीं करूँगा तब तक अवश्य बेचेन ही रहूँगा।

¹ प्रसाद, डॉ. नारायण, 'भक्ति काव्य की दार्शनिक चेतना', पृ० 9–10

² जॉर्ज, डॉ. एम. 'भक्ति आन्दोलन और साहित्य', पृ० सं० 012